3. कृषि प्रणाली

कृषि प्रणाली बहुउद्यमिता हेतु विभिन्न कृषि संघटकों की श्रेष्ठता एवं उनके एकीकरण, मृदा स्वास्थ्य संवृद्धि हेतु खेती की टिकाऊ कार्यप्रणाली के विकास, असमान परिस्थितियों में संसाधन-उपयोग दक्षताओं और फार्म संवर्गों को व्यक्त करती है।

संरक्षण कृषि: टिकाऊ कृषि उत्पादन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु संरक्षण कृषि एक नवीन उदाहरण के रूप में उभरा है। जीरो, रोटेरी और स्ट्रिप हलों और क्यारी रोपकों सरीखी संरक्षण कृषि प्रौद्योगिकियों के प्रयोग से कृषक एक घंटे में लगभग 0.4 हैक्टर क्षेत्र में गेहूं बो पाने में सक्षम हो गए हैं। इन प्रौद्योगिकियों से समय, श्रम, डीजल, लागत एवं ऊर्जा के अमूल्य संसाधनों की 60 से 80% तक बचत होती है और परंपरागत बुआई की तुलना में 9 से 37% सिंचाई जल की भी बचत होती है। ये प्रौद्योगिकियां मूल्य-प्रभावी (24-27%)

संरक्षण कृषि प्रौद्योगिकी के प्रयोग से कृषक के खेत में बोई गई गेहूं की फसल

एवं ऊर्जा दक्ष (34-37%) हैं; साथ ही परंपरागत बुआई की अपेक्षा अधिक शुद्ध लाभ (26-31%) सहित गेहूं की अधिक पैदावार (15-22%) प्रदान करती हैं तथा *फेलेरिस माइनर* में कमी (43-76%) लाती हैं। चावल-गेहूं कृषि प्रणाली में क्यारी रोपण एवं जीरो तथा स्ट्रिप हल जुताई लगातार नौ वर्षों तक अपनाए जाने पर मृदा जैविक कार्बन (15-38%) तथा समुच्चयों के औसत व्यास भार में सुधार के द्वारा मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार लाते हैं।

झारखंड की चावल-परती भूमि हेतु बहुफसली कृषि प्रणाली: झारखंड की सिंचित मध्यम भूमि स्थितियों में परंपरागत चावल-परती प्रणाली के स्थान पर प्रकर्षशील फसलोत्पादन हेतु एक वैकल्पिक प्रणाली, चावल-आलू + गेहूं (1:1 कतार के अनुपात में उगाई गई)-मूंग की खोज की गई जिससे परंपरागत चावल-परती के विरुद्ध उत्पादन में लगभग 4 गुना और रोजगार में 174% वृद्धि हुई। इस प्रणाली में अधिक लाभ (₹ 330/दिन/है.), अतिरिक्त आय (₹ 98,123/है.), बी : सी अनुपात (1.46), ऊर्जा उत्पादन (218.7 केएमजे/है.), शुद्ध ऊर्जा प्राप्ति (148.4 केएमजे/है.) और भू-उपयोग दक्षता (96%) के साथ ही बेहतर पोषक उद्ग्रहण, मृदा स्वास्थ्य बने रहना और अल्प खरपतवार जैसे गुण हैं।

तटीय खारीयता प्रबंधन हेतु एकीकृत फार्मिंग: भू-गढ़न द्वारा एकीकृत फसल-सह-मत्स्य पालन ने तटीय कृषि में महत्वपूर्ण संभावनाएं दर्शाई हैं। इस प्रणाली ने भू एवं जल की उत्पादकता में वृद्धि की है, कृषकों की आय बढ़ाई है, सिंचाई की सुविधा में इजाफा किया है और मृदा में खारीयता को घटाने तथा जल निकास की स्थितियों में सफलता पाई है। भू-गढ़न प्रौद्योगिकियों से शुष्क महीनों में उभरी हुई भूमियों की मृदा में खारीयता बनने में कमी आई है क्योंकि इन भूमियों की ऊंचाई खारे भू-जल से अधिक है और वर्षा जल (मीठा जल) खेत में एकत्र हो जाता है। कैनिंग टाउन, आरआरएस, सीएसएसआरआई द्वारा विभिन्न भू-गढ़न मॉडलों के अर्थशास्त्र की गणना में फार्म-तालाब मॉडल सर्वाधिक लाभकारी भू-गढ़न मॉडल के रूप में सामने आया है जिसका बी : सी अनुपात 2.33 है। इसके बाद क्रमश: धान-सह-मत्स्य, गहरी नाली व ऊंची मेड़, छिछली नाली व मेड़ तथा धान-सह-खारे पानी की मछली का स्थान आता है। सर्वाधिक पसंद की गई चावल की किस्मों में खरीफ हेतु सीएसआरसी (एस) 21-2-5-बी-1-1 एवं गीतांजलि तथा रबी हेतु विधान 2 एवं कैनिंग 7 की पहचान की गई।

पूर्वी घाटों की झूम खेती अवक्रमित भूमियों में संसाधन संरक्षण: पूर्वी घाटों की झूम खेती क्षेत्रों में खरीफ के मौसम में वर्षापोषित स्थितियों में रागी तथा उच्चभूमि धान के साथ वीथिका खेती में ग्लिरिसिडिया रोपण से नियंत्रित स्थितियों (1.36 टन/है.) की तुलना में रागी में अधिक अनाज (2.10 टन/है.) तथा भूसे (3.46 टन/है.) का उत्पादन हुआ तथा पानी बहाव (14.4%:) एवं मृदा ह्रास न्यूनतम रहा। इसी प्रकार, उच्चभूमि धान के साथ ग्लिरिसिडिया के नालियों में रोपण से नियंत्रित (1.50 टन/है.) स्थितियों में प्राप्त उत्पादन की तुलना में अनाज (2.21 टन/है.) तथा भूसे (4.78 टन/है.) का अधिकतम उत्पादन प्राप्त हुआ।

वीथिका कृषि प्रणाली अंतर्गत रागी और धान की खेती

उथले जलस्तर में मखाने की खेती: परंपरागत रूप से मखाना प्राकृतिक जलाशयों, जैसे तालाबों, झीलों, दलदली भूमि और नालों में उगाया जाता है। इन जलाशयों में रुके हुए पानी की औसत गहराई सामान्यतया 1.2 से 1.8 मीटर तक होती है। जलाशयों में जल की अधिक गहराई होने से फसल का सस्यविज्ञानीय प्रबंधन करना एक टेड़ी खीर होता है जिसके कारण इस फसल की उत्पादकता बहुत कम (0.8-1.0 एमजी/है.) है। इसके साथ ही इन जलाशयों में कोई अन्य फसलोत्पादन संभव नहीं होता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए निचली भूमि पर स्थित खेतों में मखाने को पैदा करने की संभावनाओं का पता लगाने के लिए एक प्रयोग किया गया।

एक गहन संरचना वाले निम्नभूमि खेत को दो गहरी जुताई तथा 3.0 एमजी/है. की दर से गोबर की खाद डालकर तैयार किया गया। जुताई के बाद प्रत्येक प्लॉट के चारों ओर 0.45 मीटर ऊं चाई और 0.6 मीटर चौड़ाई के बंध का निर्माण किया गया। प्लॉटों को 0.15 मीटर की ऊं चाई तक पानी से भर दिया गया और 4 सें.मी. की गहराई पर 3 स्वस्थ बीजों को डालकर 1.25 मीटर × 1.25 मीटर की दूरी पर मखानों की सीधी बुआई की गई। परंपरागत प्रणालियों के 1.0 एमजी/है. की तुलना में 2.84 एमजी/है. का बीजोत्पादन प्राप्त किया गया जो इस प्रणाली की क्षमता को दर्शाता है।

जलमार्गी भूमि में बांस रोपण: तीन प्रमुख भारतीय नदियों, माही, चंबल और यमुना, के किनारे स्थित अत्यधिक अवक्रमित घाटीयुक्त भूमि पर बांस रोपण और इसे संबल प्रदान करने के लिए अलग-अलग गड्ढों के निर्माण से 80% वर्षाजल उपयोग के साथ अधिक जीवितता प्रतिशत और पादप वृद्धि प्राप्त होती है। इस प्रणाली से लगभग ₹ 27,000 से 36,000/है./वर्ष की दर से आय प्राप्त की जा सकती है।

बुंदेलखंड में वर्षापोषित स्थितियों में अंत: सस्य एवं काश्त प्रणालियां: मध्य प्रदेश भारत वर्ष में अधिकतम सोयाबीन उत्पादन करने वाला प्रदेश है परंतु बुंदेलखंड क्षेत्र में उत्पादन का स्तर बहुत कम है। वर्षा अत्यधिक अनिश्चित और अनियमित है तथा यह वर्षापोषित स्थितियों में नमी की कमी एवं फसलों के नुकसान के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है। विभिन्न सोयाबीन-आधारित प्रणालियों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि लाल और काली मृदाओं में सोयाबीन एकल खेती की तुलना में अंतराल खेती अधिक लाभप्रद है। लाल मृदा में सोयाबीन + अरंडी अंतरसस्य प्रणाली में अधिकतम सोयाबीन तुल्य उत्पादन (548 किग्रा/है.) प्राप्त हुआ और दूसरे स्थान पर सोयाबीन + क्लस्टर बीन (347 किग्रा/है.) का उत्पादन रहा। काली मृदाओं में, सोयाबीन + तिल (750 किग्रा/है.) प्रणाली में सोयाबीन की अधिकतम तुल्य उत्पादकता प्राप्त हुई जिसके बाद सोयाबीन + क्लस्टर बीन (535 किग्रा/है.) का स्थान रहा।

पॉन्गैमिया और बांसों का सूक्ष्मप्रवर्धन: बांस (*बैम्बूसा बाल्कोआ, बी.वल्गैरिस*) और करंज (*पॉन्गैमिया पिन्नाटा*) के तीव्र एवं सामूहिक प्रवर्धन हेतु म्यूराशिगे एवं स्कूग (एमएस) माध्यम में वृद्धि नियंत्रकों की विभिन्न सांद्रताओं से पूरित सूक्ष्मप्रवर्धन तकनीक विकसित की गई। खेतों में उगे हुए बांस और करंज के उपशाखीय कलिका युक्त 2-3 सेंमी आकार के संधियुक्त खंडों को एक्सप्लांट के रूप में प्रयोग किया गया। 0.2% $HgCl_2$ के 15 मिनट तक उपचारण के फलस्वरूप जर्महीन संवर्धों की अधिकतम संख्या (100%) प्राप्त की गई। जुलाई-अगस्त के दौरान बांस के नए वर्धकों से प्राप्त उपशाखीय कलिकाएं संवर्धन हेतु सर्वश्रेष्ठ थीं। साइटोकाईनिन पूरित एमएस माध्यम में अधिकतम कलिका खिलने की क्रिया (*बी.बाल्कोआ* के लिए 96% तथा *बी.वल्गैरिस* के लिए 100%) दर्ज की गई। 2.0-5.0 मिग्रा/लीटर बेंजाइलएमीनोप्यूरीन (बीएपी) से पूरित एमएस माध्यम में प्रथम से तृतीय उपसंवर्धन के दौरान *बी.वल्गैरिस* में 3-4 गुनी और *बी.बाल्कोआ* में 2-3 गुनी औसत कोंपल प्रवर्धन दर प्राप्त हुई। इन्हें एमएस + 5.0 मिग्रा/लीटर बीएपी माध्यम में उपसंवर्ध और प्रवर्धित किया गया था। कोंपल प्रवर्धकों के नियमित (चार सप्ताह के अंतराल पर) रूप से उपसंवर्धन करने पर प्रवर्धन दर में बढ़ोत्तरी हुई। कोंपल प्रवर्धन के 4-6 चरणों के बाद कोंपल प्रवर्धन दर में वृद्धि हुई और इसके पश्चात 4-6 गुना स्थिर औसत प्रवर्धन दर प्राप्त की गई। कोंपल प्रवर्धकों को 1.0 से 5.0 मिग्रा/लीटर नैफ्थेलीन एसीटिक अम्ल (एनएए) या इंडोल ब्यूटाईरिक अम्ल (आईबीए) से पूरित किए गए एमएस माध्यम पर उप-सवंर्धित करने पर जड़ता प्राप्त हुई। एमएस + 4.0 मिग्रा/लीटर एनएए एवं एमएस + 5 मिग्रा/लीटर आईबीए पर 30-35 दिनों के उपसंवर्धन पर श्रेष्ठतम जड़ता (80-85%) प्राप्त हुई। सामान्यतया प्रवर्धक के निचले भाग से 4-8 जड़ें पैदा हुईं। जड़ता माध्यम में चार सप्ताह के संवर्ध पर स्वस्थ जड़ एवं कोंपल तंत्र विकसित हुआ। कठोरीकृत पादपों में जीवितता 65% थी।

चावल-मत्स्य-उद्यानिकी आधारित बहुसोपान फार्मिंग प्रणाली मॉडल: देश की 40 लाख हैक्टर वास्तविक जलमग्न भूमि (50-100 सेंमी, अधिकतम 150 सेंमी जल गहराई), विशेषकर पूर्वी भारत की 30 लाख हैक्टर भूमि में फार्म उत्पादकता एवं आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से 0.8 है. भूमि पर क्षमतावान बहुसोपान चावल-मत्स्य-उद्यानिकी आधारित फार्मिंग का विकास किया गया। इस प्रणाली का मॉडल उच्च भूमि पर लघु-अवधि और दीर्घावधि फलीय फसलों, कंदीय फसलों और सब्जियों (सोपान I एवं II); वर्षापोषित निम्नभूमि चावल एवं इसके पश्चात विभिन्न फसलों को सोपान III में; गहरे जल वाले चावल और इसके बाद चावल एवं/अथवा सब्जियों को सोपान IV में; मछली और झींगे को चावल के खेत और तालाबों में तथा कुक्कुट, बत्तख, फल, बागानी फसलों, फूलों, कृषिवानिकी एवं अन्य को तंत्र के बंध में एकीकृत करता है।

इस प्रणाली में एक है. से सालाना लगभग 14-15 टन खाद्य फसलें, 1 टन मछली एवं झींगे, 0.5-0.8 टन मांस तथा 10,000-12,000 अंडे प्राप्त किए जा सकते हैं, इसके साथ ही फूलों एवं 3-

सफलता गाथा

प्रायद्वीपीय भारत के लिए चीकू / आम-टीक आधारित कृषि वानिकी पद्धति

उच्च वर्षाश्रित क्षेत्रों के लिए जहां सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है के लिए एक बहु-संघटकीय कृषिवानिकी पद्धति जिसमें चीकू आधार फसल, टीक को चीकू के लाइनों में और कृषि फसल को बीच के स्थान में बोने की पद्धति विकसित की गयी। प्रारंभिक वर्षों में फसल के बीच अधिक दूरी रखकर अंत: फसल पैदा की गयी। ग्राम क्याराकोप्पा, जिला धारवाड़ के दो किसानों के खेतों में 1996 में प्रदर्शनों को बढ़ावा दिया गया, संस्तुत अंतराल 10 मी. × 10 मी. ढलान की लाइनों में चीकू को लगाया गया। दो चीकू के पौधों के बीच 3 मी. - 2 मी. - 2 मी. - 3 मी. दूरी के बीच टीक के पौधे लगाये गये। चीकू+टीक के बीच में हार्सग्राम, ज्वार और बाजरा उगाया गया, खेत में फसल की असफलता में चीकू की फसल बीमा का काम करती है। कुछ सुधार के बाद दूसरे किसान ने चीकू की जगह आम लगाकर इसको अपनाया। सातवें और आठवें वर्ष से चीकू और आम में फल आना शुरू हुआ, फिलहाल चीकू के 30 से 40 किग्रा प्रति पेड़ से ₹ 22,000-25,000/ है. की आमदनी हो रही है। आम के प्रति पेड़ से 30-50 कि.ग्रा. उत्पादन से ₹ 36,000-60,000/ है. की आमदनी हो रही है। दोनों स्थितियों में खेत की फसल से ₹ 2,500 से ₹ 3,500 है. की आमदनी हो रही है। प्रत्येक टीक के पोल का मूल्य लगभग ₹ 120 है, समय के साथ बहुवर्षीय (चीकू/आम/टीक) पेड़ों के आकार में वृद्धि से खेती की फसल का उत्पादन 2007 के बाद बंद करना पड़ा। इस पद्धति ने रोजगार का सृजन किया जो 180 मानव दिवस प्रति वर्ष था। वही खेत जिससे किसान को ₹ 3,000/है./वर्ष की आमदनी होती थी। चीकू से ₹ 23,500/है./वर्ष और आम से ₹ 48,000/है./वर्ष की आमदनी हुई जिससे किसानों की आर्थिक सामाजिक दशा में सुधार हुआ।

चावल-मत्स्य-उद्यानिकी आधारित बहुसोपान फार्मिंग प्रणाली

5 टन पशु चारे की प्राप्ति भी हो सकती है। सदाबहार फलदार फसलों और कृषिवानिकी संघटकों के उत्पादों से आठवें वर्ष से 10-12 टन रेशा/जलाऊ लकड़ी के साथ खाद्य फसलोत्पादकता में 16-17 टन की अतिरिक्त वृद्धि हो जाएगी। इस प्रणाली से पहले वर्ष में शुद्ध आय लगभग ₹ 100,000/है. थी और आठवें वर्ष एवं इसके पश्चात इसके ₹ 150,000 या अधिक पहुंच जाने की उम्मीद है।

अत्यधिक जल वाले क्षेत्रों में चावल की खेती के परंपरागत तरीकों की अपेक्षा यह प्रणाली फार्म उत्पादकता में 15-17 गुना और शुद्ध आय में 20 गुना से अधिक वृद्धि कर सकती है। यह 300 मानव-दिवस/है./वर्ष का अतिरिक्त फार्म रोजगार पैदा करती है। इसके अतिरिक्त चावल सह मत्स्य पालन के कुछ अन्य लाभ भी हैं, जिनमें चावल के खेतों का कार्बन स्वविियोजन, मृदा के पोषकता स्तर में सुधार, सूखे के दौरान फसलों को जीवनरक्षक सिंचाई की उपलब्धता, अंत:निर्मित लघु-जलग्रहण क्षेत्रों के कारण खेत से पानी की निकासी तथा चावल, मछली, बत्तख एवं अन्य जैविक संघटकों के मध्य लाभकारी अंत:प्रजातीय अंत:क्रिया होने के कारण खरपतवार एवं अन्य कीटों का जैविक नियंत्रण सम्मिलित हैं। ओडिशा के कुछ इलाकों में इस प्रणाली को अपनाया गया है।

पूर्व में तैयार क्यारियों में बुआई तकनीक: कोयंबतूर में सिंचित कपास के लिए खरपतवार प्रबंधन की एक नई विधि मानकीकृत की गई। इस तकनीक में, कपास की बुआई से दो सप्ताह पूर्व मेड़ और क्यारी तैयार कर सिंचाई कर दी गई, जिससे खरपतवार के बीजों का अंकुरण हो गया। सिंचाई के एक सप्ताह पश्चात, पैंडिमिथैलिन एवं ग्लाईफॉस्फेट के मिश्रण का छिड़काव किया गया, इसमें से प्रथम ने अवशिष्ट क्रिया द्वारा एक माह तक अंकुरित होने वाले खरपतवारों को नष्ट किया जबकि अंकुरित हो चुके खरपतवार ग्लाईफॉस्फेट द्वारा नष्ट कर दिए गए। इस प्रकार कपास एवं अन्य मध्यवर्ती फसलें खरपतवारों से जोस आजमाईश से बच गईं। बुआई के 35-40 दिवस पर हाथों से एक बार खरपतवार निकालने की क्रिया को जोड़कर खरपतवार से मुकाबले के लिए महत्वपूर्ण काल तक खरपतवार-मुक्त स्थिति प्राप्त की जा सकती है। इस विधि से कपास बीजों का उत्पादन 5,682 किग्रा/है. के तुल्य दर्ज किया गया। ■